अध्याय - 8

जातीय व्यवस्था की चुनौतियाँ

आप जानते हैं कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और समाज के बिना मनुष्य का जीवन संभव नहीं है। किन्तु समाज का विकास धीरे–धीरे होता है और इस क्रम में समाज के शक्तिशाली वर्ग ने अपनी सत्ता को बनाए रखने की हमेशा कोशिश की है। पूरी दुनिया में मानव समाज कई वर्गों में प्राचीन काल से ही बँटा रहा है, जिसमें एक शक्तिशाली और एक कमजोर वर्ग सदैव रहा है।

जाति सुधार हेतु तर्क

भारत में सामाजिक भेदभाव जाति व्यवस्था पर आधारित रहा है। इसे लेकर एक ओर एक विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग, जिसने समाज पर अपने प्रभुत्व की स्थापना की और श्रेष्ठ,एवं उच्च जाति के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त की, तो दूसरी ओर एक शोषित और पीड़ित वर्ग अस्तित्व में आया । हमारे देश में भी इस प्रकार के सामाजिक भेदभाव के अनेक रूप सामने आये, जिसने कई प्रकार की सामाजिक कुरीतियों को जन्म दिया।

जैसा कि आप पहले पढ़ चुके हैं प्राचीन काल में समाज में वर्ण व्यवस्था थी, जिसमें पेशे या काम के आधार पर चार वर्ण थे; ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। आगे चलकर इन विभाजनों ने जातियों का रूप धारण कर लिया। इनमें पुनः कई उपजातियाँ बन गईं। इनके बीच सम्बंधों में धीरे–धीरे संकीर्णता आई, ऊँच नीच का भेद–भाव बढ़ा, अन्तरजातीय शादी विवाह एवं सम्बंधों पर रोक लग गई। जाति का निर्धारण काम की जगह जन्म के आधार पर होने लगा। जाति प्रथा का सबसे कठोर रूप छुआ–छूत की भावना के रूप में प्रकट हुआ जिसमें निम्न जातियों को अपवित्र माना गया और उनका बहिष्कार किया गया।

आधुनिक काल में कई कारणों से, खास कर शिक्षा के विकास और पुराने विचारों को नए ढंग से परखने के कारण, जाति प्रथा, एंव इस पर आधारित भेद–भाव, शोषण और तिरस्कार

को दूर करने या उसमें सुधार लाने के उपाय आरंभ हुए।

उपेक्षित जन–समूहों पर प्रभुत्व के कुछ तीखे

उदाहरण

बंगाल के चांडाल, बिहार के डोम, दक्षिण बिहार के भुइया, महाराष्ट्र के महार और उत्तर भारत के अनेक क्षेत्रों में चमार जातियों के साथ कठोर भेदभाव की नीति अपनाई गई। चमड़े का काम करने वाले लोगों को परम्परागत रूप से नीची नजर से देखा जाता था।

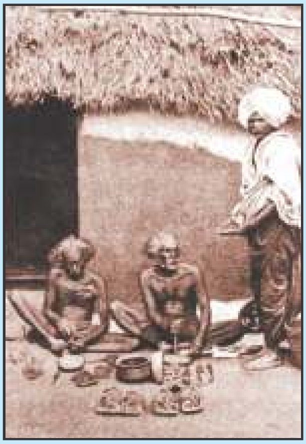

चित्र 1 – चमड़े के जुते बनाते लोग

उन्नीसवीं सदी में देश के अनेक भागों में अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करने वाले और नगरों में रहने वाले कुछ लोगों द्वारा इस व्यवस्था की कमजोरियों को सामने लाने और एक नई चेतना जगाने के उपाय किये गये। इसके तहत इस सदी में ऐसे कई सामाजिक आंदोलन हुए जिसका उद्देश्य समाज सुधार था। जाति प्रथा की आलोचना आरंभ हुई जो समाज में विभाजन और असमानता का कारण बनी हुई थी।

इन सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए भारतीय पढ़े–लिखे वर्गों ने प्रयास किया ताकि समाज के सभी वर्गों का उत्थान हो और उनके बीच बराबरी की भावना विकसित हो। इस कोशिश में कई समाज सुधारक शामिल थे। यह एक ओर विदेशी सरकार से आजाद होने की लड़ाई लड़ रहे थे तो दूसरी ओर समाज में अन्याय और अनुचित परम्पराओं का भी अंत चाहते थे।

चूँकि धर्म और समाज सुधार आंदोलन का उद्देश्य एक भेदभाव रहित समाज बनाने का था इसलिए जातीय भेदभाव को दूर करने को विशेष महत्व दिया गया। इन समाज सुधारकों में कई ऐसे लोग थे जो जातीय असमानता के भी विरोधी थे। इन सुधारकों और सुधार–संगठनों के सदस्यों में बहुत सारे ऊँची जातियों के लोग भी थे जो जातीय भेदभाव

और असमानता की समाप्ति चाहते थे। विभिन्न जातियों के बीच आपसी सामाजिक संबंधों को बेहतर बनाना चाहते थे। साथ ही वे पवित्रता और अपवित्रता के कड़े नियमों के आधार पर भेद–भाव और छुआ–छूत के विरोधी थे। जाति व्यवस्था में ब्राह्मण जाति सबसे ऊपर थी जिसे कई अधिकार एवं सुविधाएँ प्राप्त थीं। इस तरह यह समाज पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने में सफल थे।

ब्राह्मण – समाज का वह वर्ग जिसने अपनी शिक्षा, ज्ञान एवं धार्मिक क्रियाकलापों के आधार पर समाज पर एकाधिकार स्थापित कर दूसरी जातियों पर अपना प्रभाव कायम किया।

क्षत्रियों और वैश्यों के बीच जाति प्रथा इतनी कठोर और संकीर्ण नहीं थी, लेकिन ब्राह्मणों के जो विशेषाधिकार थे उससे यह वंचित रहे। क्षत्रिय वर्ग शासक वर्ग होने के नाते समाज में एक प्रभावशाली वर्ग के रूप में उभरा, जबकि वैश्य वर्ग ने आर्थिक संपन्नता के कारण स्वयं को आगे बढ़ाया।

अंत्यज–समाज का वह वर्ग जिसे सभ्य समाज की परिधि से बाहर रखा जाता था।

औपनिवेशिक काल में ब्राह्मणों ने नई अंग्रेजी शिक्षा को अपनाया इसलिए प्रशासन के महत्वपूर्ण पदों पर उन्होंने अपने को स्थापित किया। नीचे दर्जे के सरकारी कर्मचारी, वकील, चिंतक, साहित्यकार आदि भी इसी समूह से थे। इस प्रकार के माहौल ने गैर ब्राह्मण जातियों की स्थिति को प्रभावित किया, उनकी सामाजिक दशा में गिरावट आई और उनमें असुरक्षा और हीनता की भावना बढ़ी।

समाज में एक छोर पर ब्राह्मण थे तो दूसरे छोर पर अछूत। अधिकांश पीड़ित और दलित समूह का संबंध समाज की निचली श्रेणियों से था और वह जटिल एवं कठोर स्थिति में जीने के लिए बाध्य थे। इसलिए वे सामाजिक व्यवस्था में मौजूद अन्याय के खिलाफ थे।

दूसरी ओर उन्नीसवीं सदी के दूसरे हिस्से तक 'निम्न' जातियों के अंदर से भी जातीय भेदभाव के खिलाफ आवाज उठाई गई एवं उनके द्वारा सामाजिक समानता और न्याय की मांग के लिए आंदोलन शुरू कर दिये गए। इस नई चेतना को गैर ब्राह्मण जाति समूहों ने

प्रस्तुत किया जो विशेष रूप से अपनी दयनीय दशा में सुधार लाना चाहते थे। भारत के अनेक भागों में यह जातियाँ बहुत सारी असुविधाओं से मुक्ति के लिए आवाज उठाने लगी थीं। इस प्रक्रिया में निचली जाति के आंदोलनों में उनकी जातीय पहचान एकता का आधार बन गई। इन आंदोलनों के नेताओं में प्रारंभिक नाम महात्मा ज्योतिराव फूले का आता है।

महात्मा ज्योतिराव फूले (1824—1890)

ज्योतिराव फूले जाति व्यवस्था को मनुष्यों की समानता के खिलाफ मानते थे। उन्होंने जाति व्यवस्था को पूरी तरह से नकारा। अछूत वर्ग के खिलाफ अमानवीय व्यवहार और उन्हें सामान्य मानव अधिकार से वंचित रखने की स्थिति ने फूले को जाति प्रथा का प्रबल विरोधी बना दिया।

अपने विचारों के प्रसार के लिए फूले ने पत्र—पत्रिकाओं और पुस्तकों के प्रकाशन तथा भाषण और लेखन का माध्यम अपनाया। उन्होंने मराठी भाषा का प्रयोग किया ताकि आम लोगों की भाषा के द्वारा उनके विचार को जन साधारण तक आसानी से पहुँचाया जा सके। उन्होंने आर्य वैदिक परंपरा का विरोध करने के लिए ''दीनबंधु'' नामक मराठी पत्रिका निकाली। 1873 में 'गुलामगिरी' नाम से निकाली गई अपनी पुस्तक में 'फूले ने शूद्रों की दासता के कारणों की व्याख्या की और इसकी तुलना अमरीकी नीग्रो (काले गुलामों) से की। इस तरह उन्होंने भारत की निम्न जातियों और अमरीका के काले गुलामों की दुर्दशा को एक दूसरे से जोड़ दिया। फूले ने जाति प्रथा की आलोचना को सभी प्रकार की असमानता से जोड़ा। असमानता के खिलाफ लोगों को जगाना ही उनके संघर्ष का मूल उद्देश्य था।

चित्र 2 — ज्योतिराव फूले

जातिगत असमानताओं और शूद्र जातियों की सामाजिक अधीनता तथा आर्थिक पिछड़ेपन के बीच संबंध के बारे में भी ज्योतिराव फूले ने चेतना जगाई। उच्च जातियों ने किस तरह किसानों का शोषण किया उसका विश्लेषण उन्होंने विस्तार

से किया। किसान लगान के बोझ और महाजनों के अत्याचार से परेशान थे। इसके विरोध में महात्मा फूले उन्हें समाज में सम्मान दिलाना चाहते थे।

"गुलामी"—फूले ने यह पुस्तक उन सभी अमरीकियों को समर्पित की जिन्होंने गुलामों को मुक्ति दिलाने के लिए संघर्ष किया था। इस पुस्तक के छपने के लगभग दस वर्ष पहले अमरीकी गृह युद्ध हुआ था जिसके फलस्वरूप अमरीका में दास प्रथा खत्म हो गई थी।

फूले ने अत्याचार और उत्पीड़न से संघर्ष करने के लिए कई प्रयास किये। उन्होंने ब्राह्मणों के उस दावे को नकारा कि आर्य होने के कारण वह औरों से श्रेष्ठ हैं। फूले का तर्क था कि आर्य विदेशी हैं और वे यहाँ के मूल निवासियों को हरा कर उन्हें निम्न मानने लगे थे। फूले के अनुसार यह धरती यहाँ के देशी लोगों की, कथित निम्न जाति के लोगों, की है। अतः उन्होंने सुझाव दिया कि शूद्रों (श्रमिक जातियाँ) और अतिशूद्रों (अछूतों) को जातीय भेदभाव खत्म करने के लिए संगठित होना चाहिए। इस तरह फूले द्वारा स्थापित सत्यशोधक समाज नामक संगठन ने जातीय समानता के समर्थन में मुहिम चलाई। फूले ने गैर ब्राह्मणों का मनोबल बढ़ाया। उन्होंने धार्मिक विचारधारा और जाति प्रथा को पूरी तरह से नकार दिया। उन्होंने महाराष्ट्र की सभी निम्न जातियों के लिए एक सामूहिक पहचान बनायी।

फूले ने उच्च जाति के नेताओं के उपनिवेशवाद विरोधी राष्ट्रवाद की भी कड़ी आलोचना अपनी एक रचना 'काश्तकार की चाबुक" में की। राजनीति में किसान को एक वर्ग की तरह प्रवेश कराने वाले वह पहले व्यक्ति थे।

वीरशेलिंगम – 1848–1919

दक्षिण भारत में भी सामाजिक भेदभाव को लेकर वंचित वर्ग द्वारा कई आंदोलन चलाये गये, जिससे सामाजिक असमानता की स्थिति समाप्त हो सके। ऐसे आंदोलन में वीरशेलिंगम की एक महत्वपूर्ण भूमिका रही। इनका पूरा नाम कुंडुकरि वीरशेलिंगम था। कलकत्ता तथा बंबई जैसे बड़े शहरों में चलाये गये सुधार आंदोलन में जिन समकालीन उच्च कुल के व्यक्तियों की भूमिका रही, उससे भिन्न परिस्थिति में वीरशेलिंगम का जन्म एक निर्धन परिवार

में हुआ था। अपने जीवन के अधिकांश समय में उन्होंने स्कूल शिक्षक के पद पर काम किया। उन्होंने तेलुगू भाषा में अनेक लेख लिखे जिसके लिए उन्हें आधुनिक तेलुगू गद्य साहित्य का जनक कहा जाता है। दक्षिण भारत में भी महिलाओं की स्थिति चिंताजनक थी। अतः इनके द्वारा महिला उत्थान के प्रति जागरूकता पैदा की गई। विधवा पुनर्विवाह, नारी शिक्षा, महिला मुक्ति जैसी सामाजिक बुराइयों के जैसे विषयों के प्रति उनके उत्साह ने उन्हें आंध्र के समाज सुधारकों की अगली पीढ़ी के लिए प्रेरणा का स्रोत बना दिया।

उस समय के मद्रास प्रेसिडेंसी क्षेत्र में समाज सुधार के प्रयासों की लहर को अनेक प्रकार के जाति संगठनों एवं जातीय आंदोलनों ने एक विशिष्ट स्वरूप दे दिया। सदी के समाप्त होने तक अनेक जातीय संगठन सुधार आंदोलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगे। उनके द्वारा चलाये गये आंदोलन का प्रभाव तमिलनाडु की गुंडर जाति के संगठन, कोंगु बेल्लला संगम, मैसूर के वोकालिंगा तथा लिंगायत संगठनों, केरल के एझावा जाति के एस.एन.डी.पी. योगम आदि पर पड़ा (जिसकी चर्चा हम आगे करेंगे)। जातीय आंदोलनों के नेताओं ने जाति विशेष के सदस्यों की सामान्य विरासत पर बल दिया और सामाजिक तौर तरीकों में बदलाव लाने का प्रयास किया।

वीरशेलिंगम द्वारा चलाया गया आंदोलन एक प्रेरणा स्रोत के रूप में स्वीकार किया जाता है जिसने दक्षिण भारत में ऐसे दूसरे महत्वपूर्ण संगठनों एवं आंदोलनों को आगे बढ़ाने में सहायता की। इस परिवर्तन की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी कि जातीय संगठनों ने धीरे–धीरे राजनीतिक शक्तियों का रूप ले लिया। इसका परिणाम बीसवीं सदी में चलाये गये आंदोलनों में देखा जाता है।

नारायण गुरु : 1855 – 1928

जैसा कि पहले चर्चा की गई, उन्नीसवीं सदी के मध्य तक निम्न जातियों के भीतर से भी जातीय भेदभाव के खिलाफ आवाज उठाई गई। इस वर्ग ने भी आंदोलन के द्वारा सामाजिक समानता और न्याय की मांग की। केरल मे एझावा निम्न जाति में जन्में नानू आसन (जो बाद में श्री नारायण गुरु के नाम से जाने गये), एक धार्मिक गुरु के रूप में उभरे। इन्होंने अपने

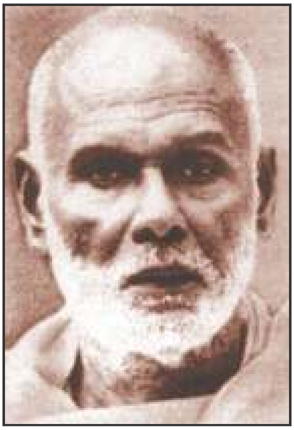

चित्र 3 – श्री नारायण गुरु

लोगों के बीच एकता का आदर्श रखा। उन्होंने प्रेरणा दी कि उनके पंथ में जाति का भेदभाव नहीं होना चाहिए और सभी को एक गुरु में विश्वास रखना चाहिए। इनके द्वारा श्री नारायण धर्म परिपालन योगम की स्थापना 1902 में की गई। इस संगठन के समक्ष दो उद्देश्य थे, एक छुआ–छूत का विरोध करना और दूसरा, पूजा, विवाह, और मृतक के अंतिम संस्कार की विधि को सरल बनाना।

चूँकि इन पंथों की स्थापना उन लोगों ने की जो स्वयं 'निम्न' जातियों से थे और उनके बीच ही काम करते थे अतः उन्होंने 'निम्न' जातियों के बीच प्रचलित आदतों और तौर–तरीकों को बदलने का प्रयास किया और उच्च वर्ण के तौर–तरीकों को अपनाने पर बल दिया, ताकि निम्न जातियों में स्वाभिमान पैदा किया जा सके। इस संगठन के द्वारा दक्षिण भारत में मंदिर में प्रवेश अधिकार के लिए आंदोलन प्रारंभ हुआ। बाद में 1920 के दशक में यह संगठन माधवन के नेतृत्व में गाँधीवादी राष्ट्रवाद से प्रभावित हुआ। केरल में बसे दलित भी इस संगठन से प्रभावित हुए एवं अपने उद्धार के उपाय के लिए स्वयं आगे बढ़े। इस प्रकार दक्षिण भारत के समाज सुधार आंदोलन ने समाज के दबे वर्ग को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ने का सफल प्रयास किया।

इन्हें भी जानें

मद्रास बोर्ड ऑफ रेवेन्यू 1818 द्वारा दिये गये सर्वेक्षण की रिपोर्ट से जानकारी प्राप्त होती है कि निचली जातियों के समूहों से आए खेतिहर मजदूर लगभग गुलामी की स्थिति में ठेल दिये गये थे।

ई.वी. रामास्वामी नायकर (पेरियार) (1879–1973) और आत्मसम्मान आंदोलन

बीसवीं सदी के आरंभ में गैर ब्राह्मण आंदोलन आगे बढ़ा। यह प्रयास उन गैर ब्राह्मण जातियों का था जिन्हें शिक्षा, धन और प्रभाव हासिल हो चुका था। सामाजिक न्याय की मांग करते हुए इनके द्वारा सत्ता पर ब्राह्मणों के दावे को चुनौती दी गई एवं गैर ब्राह्मण समूहों के लिए सांस्कृतिक और सामाजिक उत्थान के उपाय किये गये।

ई.वी. रामास्वामी नायकर (पेरियार) ने जाति व्यवस्था की आलोचना की। उन्होंने मानव

जाति की मौलिक समानता और गरिमा पर बल दिया। पेरियार जो स्वयं एक सन्यासी थे, हिन्दु वेद पुराणों के कट्टर आलोचक थे। वह विशेषकर भगवद्गीता, रामायण और मनु द्वारा रचित संहिता के विरोधी थे उनका मानना था कि ब्राह्मणों ने निचली जातियों पर अपनी सत्ता तथा महिलाओं पर पुरुषों का प्रभुत्व स्थापित करने के लिए इन पुस्तकों का सहारा लिया है।

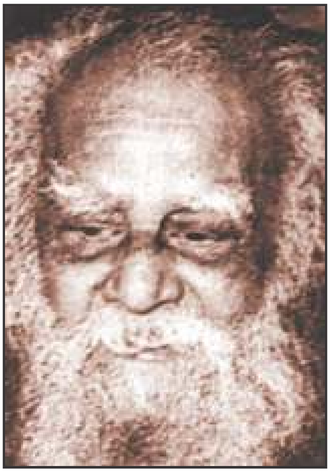
चित्र 4 – पेरियार

1924 की एक छोटी घटना और उनके व्यक्तिगत अनुभव ने उन्हें कांग्रेस दल से अलग कर दिया, यद्यपि असहयोग आंदोलन में उन्होंने सक्रिय हिस्सा लिया था। जब कांग्रेस द्वारा आयोजित एक भोज में निम्न जाति के लोगों को अलग बैठाया गया तब पेरियार ने फैसला किया कि अछूतों को अपने स्वाभिमान के लिए स्वयं लड़ना होगा। इसी बात को ध्यान में रखते हुए उन्होंने 1925 में स्वाभिमान आंदोलन शुरू किया ताकि गैर ब्राह्मण जाति को जागरूक बनाया जा सके। पेरियार ने गैर ब्राह्मण समूहों के उत्थान के लिए अतिसुधारवादी विचारधारा अपनाई जिसे लेकर कई विवाद भी हुए। फिर भी उनके आंदोलन का सामाजिक आधार गाँव के जमींदारों तथा नगर के व्यवसायिक समूहों तक सीमित था, इसलिए अछूतों को संघटित करने में असफल रहे।

मई 1933 में कुडी अरसु नामक अपने आलेख में पेरियार ने लिखा कि 'आत्मसम्मान, आदोलन का सही मार्ग है। पूँजीपतियों और धर्म की क्रूरताओं को खत्म करना ही अपनी समस्याओं को सुलझाने का एक मात्र रास्ता है।

पेरियार के विचार इतने लोकप्रिय हुए कि तमिलनाडु के लगभग समस्त क्षेत्र में इनके नेतृत्व को स्वीकार किया गया। 1937 में जस्टिस पार्टी का नेतृत्व इन्हें सौंपा गया जो बाद में द्रविड़ कषगम् के नाम से जानी गयी। परंतु पेरियार का मनियामाई से विवाह ने एक विवाद को जन्म दिया और इनके विरोधी अन्नादुरई के द्वारा द्रविड़ मुनेत्र कड़गम ने 1949 में स्वयं को अलग कर लिया अब यह संगठन केवल एक सामाजिक सुधार चिंतन का केन्द्र नहीं रहा बल्कि इसने राजनीति में भी प्रवेश किया और इसकी लोकप्रियता आज भी तमिलनाडू के क्षेत्र

में बनी हुई है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी

महात्मा गाँधी ने भारत में आगमन के साथ जिस प्रकार से निम्न जातियों के बीच में जागरूकता उत्पन्न की, उसे एक युगान्तकारी घटना के रूप में देखा जाता है। उनके द्वारा गैर बराबरी के विरोध में आंदोलन को विशेष बढ़ावा दिया गया। 1919 में पहला अखिल भारतीय 'डिप्रेस्ड क्लास' सम्मेलन हुआ जिसमें कांग्रेस के द्वारा गाँधीजी के सुझाव पर छुआ–छूत के विरुद्ध घोषणा पत्र जारी किया गया। अछूतों और दलितों को उन्होंने ''हरिजन'' का नाम दिया। इनका उत्थान गाँधी जी का प्रमुख उद्देश्य था। उनके उद्धार के लिए गाँधी के द्वारा अनेक रचनात्मक कार्यक्रम चलाये गये। इन प्रयासों से छुआछुत की प्रथा कमजोर पड़ी। 1932 में गाँधीजी ने हरिजन सेवक संघ स्थापित किया जो उन्हें चिकित्सा और तकनीक संबंधी जानकारी एवं सुविधा पहुँचा सके। 1933 में 'हरिजन' नामक साप्ताहिक पत्रिका निकाली, जिसमें कई संवेदनशील विषय जैसे, हरिजनों का मंदिर में प्रवेश, जलाशयों को हरिजन के लिए उपलब्ध करवाना, शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश आदि का समर्थन किया गया। गाँधीजी के यह रचनात्मक कदम मानवीय भावनाओं से प्रेरित थे और इनसे राष्ट्रीय आंदोलन को नई शक्ति मिली। गाँधीजी ने जाति प्रथा में सुधार के प्रयासों के साथ छुआ–छूत के विरोध, महिलाओं की स्थिति में सुधार और हिंदू–मुस्लिम एकता को बढ़ाने के महत्वपूर्ण उपाय किये।

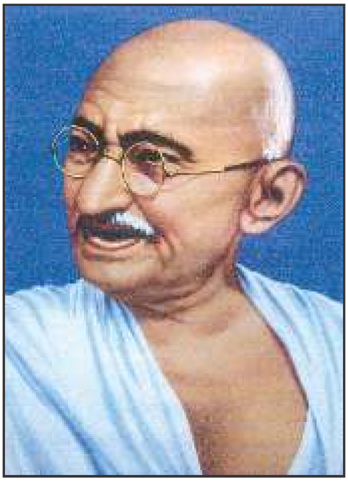

चित्र 5 – महात्मा गाँधी

जब द्वितीय गोलमेज सम्मेलन के बाद दलितों के लिए पृथक निर्वाचन की व्यवस्था हुई तब गाँधी जी अछूतों को हिन्दुओं से अलग मानने की सरकारी नीति से अत्यंत दुखी हुए और इसे समाप्त करने की मांग रखी। उन्होंने इसके विरुद्ध आमरण अनशन किया जिसके फलस्वरूप 26 सितम्बर 1932 को भीमराव अम्बेदकर के साथ 'पूना समझौता' हुआ और गाँधीजी हरिजनों के उद्धार में लगे रहे। गाँधीजी जाति प्रथा के

प्रबल आलोचक रहे। गाँधीजी भारत को केवल औपनिवेशिक शासन से मुक्त कराना नहीं चाहते थे बल्कि भारतवर्ष में जिस प्रकार की सामाजिक गिरावट आई थी, उसे दूर करने में उन्होंने असाधारण इच्छाशक्ति भी दिखाई। उनका मानना था कि भारत सही अर्थों में तब स्वतंत्र होगा जब वह अपनी आंतरिक कमजोरियों पर काबू प्राप्त कर पायेगा।

बाबा भीमराव अम्बेदकर

बाबा भीमराव अम्बेदकर ने जातीय भेदभाव और पूर्वाग्रह को बहुत निकट से महसूस किया था। इनके जीवन का उद्देश्य दलित उत्थान की भावना से प्रेरित था। वह दलित समाज को समानता का पूर्ण अधिकार प्रदान करना चाहते थे ना कि केवल कुछ छूट या किसी प्रकार की सुविधा। भारतीय जातिगत समाज में दलितवर्ग को सम्मानपूर्ण स्थान दिलाना, अम्बेदकर के लिए अधिक महत्वपूर्ण था। सामंती दासता के वह प्रबल विरोधी थे। अतः उन्होंने दलितों को शिक्षित होने का आह्वान दिया एवं दलितों के वैधानिक और राजनैतिक अधिकारों की मांग रखी। उनके द्वारा मैला ढोने की अमानवीय परंपरा की कड़ी निंदा की गई।

अम्बेदकर के द्वारा 1920 के दशक में एक प्रमुख आंदोलन प्रारंभ हुआ। इस आंदोलन को संगठित रूप देने के लिए 1924 में बहिष्कृत हितकारी सभा का गठन हुआ। 1927 में महाड़ सत्याग्रह आरंभ किया गया, ताकि अछूतों के प्रति अपनाई गई भेदभाव की नीति को समाप्त किया जा सके।

1930–31 के गोलमेज सम्मेलन के पूर्व अम्बेदकर दलित वर्ग के प्रमुख नेता के रूप में उभर चुके थे। इन्होंने दलितों के लिए एक अलगाववादी धारणा रखी जिसके आधार पर दलितों के लिए अल्पसंख्यकों की तरह पृथक निर्वाचन की मांग रखी गई। लेकिन गाँधी जी ने इसका विरोध किया और उनके सत्याग्रह के कारण 'पूणे समझौता' लागू हुआ। 1942 में अम्बेदकर के द्वारा अनुसूचित जाति संघ की स्थापना की गयी।

अम्बेदकर ने हिन्दु धर्म में भेद–भाव का विरोध किया और बौद्ध धर्म की ओर आकर्षित हुए। 1950 में अम्बेदकर ने बौद्ध धर्म अपनाया और कालांतर में इनके अनेक समर्थकों के द्वारा

धर्म–परिवर्तन किया गया। अम्बेदकर गाँधीवादी दलित विचारधारा से असंतुष्ट रहे और उसे कमजोर मानते रहे चूँकि वह दलितों के उत्थान के माध्यम को एक अलग रूप में देखते थे।

चित्र 6 – बाबा साहब भीमराव अम्बेदकर

आज भारत में जिस दर्शन को लोकप्रियता मिली है वह समता, भाईचारा और आजादी पर आधारित है। मनुष्य के सम्मान पर केन्द्रित सोच वाले इस दर्शन की एक प्राथमिकता है मनुष्य का कल्याण। सामाजिक भेदभाव से उपजे सामाजिक पिछड़ेपन और शोषण को दूर करने के उपाय इन विभिन्न दार्शनिकों एवं सुधारकों के द्वारा हुए। इन सभी ने जातिगत व्यवस्था को दूर करने के उपाय अलग तरीकों से अपनाए, पर यह आंदोलन सीमित रहे चूँकि इनका सामाजिक आधार सीमित रहा।

आज हमारे समाज में जिस संरचनात्मक परिवर्तन की आवश्यकता है, उसकी पृष्ठभूमि इन आंदोलनों ने तैयार की ताकि जाति विरोधी संघर्ष को आगे बढ़ाया जा सके। जिससे एक सुदृढ़ शोषण रहित मानवतावादी समाज की स्थापना संभव हो।

इन्हें भी जाने

1924 में अंबेदकर ने बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना करके दलित मुक्ति आंदोलन का बिगुल बजाया था। अम्बेदकर के द्वारा जाति उन्मूलन के उपाय किये गये। उन्होंने मनु स्मृति को नकारा चूँकि वह विभेदकारी दर्शन पर आधारित थी और जिसके द्वारा समाज को एक श्रेणीगत व्यवस्था में बाँट दिया गया था।

अभ्यास

आइये फिर से याद करें–

1. सही विकल्प को चुनें।

(i) फूले के द्वारा किस संगठन की स्थापना हुई?

(क) ब्राह्मण समाज (ख) आर्य समाज

(ग) सत्य शोधक समाज (घ) प्रार्थना समाज

(ii) गैर बाराबरी विरोधी आंदोलन को केरल में किसके द्वारा प्रारंभ किया गया?

(क) वीरशेलिंगम (ख) नारायण गुरू

(ग) पेरियार (घ) ज्योतिराव फूले

(iii) पेरियार के द्वारा कौन सा आंदोलन प्रारंभ किया गया?

(क) आत्म सम्मान आंदोलन (ख) जाति सुधार आंदोलन

(ग) छुआछूत विरोधी आंदोलन (घ) धार्मिक समानता आंदोलन

(iv) हरिजन सेवा संघ महात्मा गांधी के द्वारा किस वर्ष गठित किया गया?

(क) 1932 (ख) 1933 (ग) 1934 (घ) 1935

(v) बाबा भीमरॉव अम्बेदकर के द्वारा किस वर्ष बहिष्कृत हितकारणी सभा की स्थापना हुई?

(क) 1921 (ख) 1924 (ग) 1934 (घ) 1945

आइए विचार करें–

1. ज्योतिराव फूले के मुख्य विचार क्या थे?
2. वीरशेलिंगम के योगदान की चर्चा करें।
3. श्री नारायण गुरु का समाज सुधार के क्षेत्र में क्या योगदान रहा?
4. महात्मा गांधी के द्वारा छुआछूत निवारण के क्या उपाय किये गए?
5. बाबा साहब भीमराव अम्बेदकर ने जातीय भेद–भाव को दूर करने के लिए किस तरह के प्रयास किये?

आइए करके देखें–

1. आप अपने आस–पास समाज में किस तरह के असमानता को देखते हैं, इस पर वर्ग में शिक्षक की उपस्थिति में सहपाठियों से चर्चा करें?

2. समाज में जातीय भेद–भाव को मिटाने या कम करने के लिए आप क्या प्रयास कर सकते हैं, इस पर अपने विचार वर्ग में सहपाठियों एवं शिक्षक को बताएँ।

'पर्यावरण एवं वन विभाग, बिहार सरकार'
बिहार पृथ्वी दिवस (9 अगस्त) के अवसर पर 11 सूत्री संकल्प।

मैं संकल्प लेता/लेती हूँ कि

1. पृथ्वी के संरक्षण तथा पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने के लिए सदैव कार्य करूँगा।
2. वर्ष में कम से कम एक पौधा अवश्य लगाऊँगा, इसे बचाऊँगा तथा पेड़-पौधों के संरक्षण में सहयोग करूँगा।
3. तालाब, नदी एवं पोखर आदि को प्रदूषित नहीं करूँगा।
4. जल का दुरुपयोग नहीं होन दूँगा एवं इस्तेमाल के तुरंत बाद सावधानीपूर्वक नल को बंद करूँगा।
5. बिजली का अनावश्यक उपयोग नहीं करूँगा तथा आवश्यकता नहीं रहने पर बिजली के बल्ब, पंखा एवं अन्य उपकरणों को बंद रखूँगा।
6. कूड़ा-कचरा को निर्धारित स्थानों पर रखे डस्टबिन में डालूँगा तथा अन्य लोगों से भी इसके लिए अनुरोध करूँगा।
7. अपने घर तथा स्कूल को साफ रखूँगा।
8. प्लास्टिक/पॉलीथीन का उपयोग बंद कर इसके स्थान पर कपड़े या कागज के बने झोलों/थैलों का उपयोग करूँगा।
9. पशु-पक्षियों के प्रति दया का भाव रखूँगा।
10. नजदीक के कार्यों के लिए साइकिल का उपयोग करूँगा अथवा पैदल जाऊँगा।
11. आवश्यकतानुसार कागज का उपयोग करूँगा तथा इसका दुरुपयोग नहीं होने दूँगा।